महाराष्ट्र की लोकधारा : ललित - परंपरा और भवितव्य

डॉ. विद्यासागर पाटंगणकर*

सारांश

महाराष्ट्र में लोकनाट्य की एक सशक्त परंपरा रही है । लोकनाट्य धर्मविधी से संबधित होने के कारण उसे विधिनाट्य के रूप में जाना जाता है । लोकोत्सव, धार्मिक समारोह में देवदेवताओं का पूजन - यात्रा, महोत्सव में विशिष्ट नियत तिथी, प्रसंग में वह मठ - मंदिरों में आयोजित होता है । उसके पीछे धार्मिक श्रध्दाभाव तथा मनोरंजन और तत्त्वज्ञान का प्रतिपादन यह हेतु लक्षित होते हैं । महाराष्ट्र में चली आयी यह परंपरा" ललित" कीर्तन में उचित रूपसे दिखायी देती है । जैसे की गोंधल, जागरण, बोहाडा, यक्षगान, नौटंकी, दशावतार प्रयोग यह लोकरंगभूमी के आविष्कार है, वैसेही" ललित" एक लोकरंगभूमी का प्राकट्य है । हिंदुस्थान के विभिन्न राज्यों में" ललित" की परंपरा विभिन्न नामों से प्रचलित हैं । जैसे मथुरामें ब्रजबिहार, बंगाल में कृष्णलीला नाट्य, कर्नाटक में भागवतनाटक आदी ।

महाराष्ट्र में" ललित" सादर करने की परंपरा मंदिर विशिष्ट है । देव देवताओंके उत्सव के अंत में" ललित" कीर्तन किया जाता है । उस ललित कीर्तन में लोक संस्कृती के उपासक तथा विभिन्न गानोपजीवी, परंपरागत व्यवसाय करनेवाले समाज के जनजातियों के लोगों का पेहराव कर उनकी भाषा में उनका रंगपीठपर सादरीकरण किया जाता है । जैसे की, दरवेशी, मुंढा, फकीर, दंडीगान, गोंधली, जोशी, गोसावी, महार, कैकाडी, जोगी आदी ।

यह ललित रात में शुरु होकर प्रातःकाल तक चलता है । और अंत में आरती प्रसाद होकर इसका समापन होता है । महाराष्ट्र में ललित परंपरा यह संतोंकी देन है । संत एकनाथ, संत दासोपंत, संत जनीजनार्दन, रामानंद, अच्युताश्रम आदी संतोंने ललित पदों की रचना कियी है । महाराष्ट्र के बीड, अंबाजोगाई, जालना (अंबड), राक्षसभुवन, केज, तलवडा, गोंदी, विडा, धाराशिव आदी गावो में यह परंपरा मौजूद है । ललित एक

* उपप्रधानाचार्य तथा सहयोगी प्राध्यापक- मराठी विभागाध्यक्ष - बलभीम क ला विज्ञान, वाणिज्य महाविद्यालय, बीड (महाराष्ट्र।), vpatangankar@gmail.com

परंपरागत संस्कृतीका धरोहर है । महाराष्ट्र के लोकमानस का मंदिराधिष्ठित परंपराओंका सांस्कृतिक विरासत का वाहक है । देवतोओंके उत्सव प्रसंग में बहुरुपि या जैसे स्वांग रचाकर एक लीलानाट्य का सादरीकरण करना यह इसका स्वरूप है। ललित शब्द का तात्पर्य उत्सव के अंत में किया जाने वाला" लोकनाट्य" है । इसीलिए संत तुकाराम महाराज" गळीत झाली काया । हेचि लळित पंढरीराया" (देह का गलितगात्र होना यही मेरा अंतिम स्वाँग है) ऐसा कहते है ।

मुख्य शब्द : लोकनाट्य, परम्परा, धार्मिक, दशावतार, कीर्तन

ललित शब्दकी व्याख्या

ललित शब्द मराठी में" लळित" ऐसा कहाँ जाता है । संस्कृत में "लल्" धातू का मतलब लाड - प्यार ऐसा होता है। लल् से ललित शब्द की व्युत्पत्ति मानी जाती है । संत ज्ञानेश्वर महाराज ने" लळेयाचे लळे सरती । मनोरथाचे मनोरे पुरती" (ज्ञा. ९) ऐसा कहा है । डॉ. आनंदकुमार स्वामी ललित को" लीलानाट्य "संबोधित करते है। (" लोकरंगभूमी - डॉ. प्रभाकर मांडे, पृ. ॥3) लीला कथा गायन की मूल प्रेरणा भक्ती की है । मराठी में के लोकसाहित्य के भाष्यकार डॉ. प्रभाकर मांडे ने कहाँ हैं की संत एकनाथ के परदादाजी श्री. भानुदास महाराज ने" ललित" शब्द का उपयोग किया था । डॉ. मांडे ने" ललित" परंपरा का मूलस्त्रोत कन्नड प्रांतकी लोकविधीमें खोजने का प्रयास संत भानुदास महाराज के पद के आधार पर किया है ।" जाला त्रिभुवनी उल्लास । लळित गाये भानुदास" ऐसे संत भानुदास कहते है । (उनि)

महाराष्टू के मराठवाडा प्रांत में कीर्तनकी प्राचीनतम परंपरा चली आ रही हैं । उस कीर्तन में" ललित" कीर्तन की एक विशिष्ट शैली है । व्यंकटेश - बालाजीके उत्सव में दूसरे बाजीरावने पैठण के रामचंद्र गोसावी का " ललित" कर कर उन्हे वस्त्रालंकार तथा बिदागी देकर उनका सत्कार किया था इसका प्रमाण प्रसिद्ध चिंतक न्यायमूर्ती श्री. नरेंद्रजी चपलगांवकर ने अपने ग्रंथ में दिया है । " मराठवाडा साहित्य संमेलनांची अध्यक्षीय भाषणे प्रस्तावना) राष्ट्रभूषण मंडलने भी श्री. खडकवाले का ललित संपन्न किया था यह निर्देश ललित साहित्य की अध्ययनकर्ती डॉ. संपदा कुलकर्णी मे किया है

'/(" लळितानंद ")" मराठीके ज्येष्ठ भाषाविज्ञान के भाष्यकार डॉ. कृ पां कुलकर्णीने "मराठी व्युत्पत्तिकोश" में उत्सव के अंत में होनेवाला नाटक - गोंधल, रंजननाट्य . ऐसा ललित का अर्थ बताया है । महाराष्ट्र कोश में श्री दाते _ कर्वे ने उत्सव के पश्चात् रात में उत्सव देवता के सिंहासनारूढ होनेपर जो बहरूपिया स्वांग लाते है उसे ललित के नाम से बताया है ।

बीड में पाटंगण मठ में संतजनीजनार्दन स्वामींका उत्सव संपन्न होता है ।उत्सव के अंत में ललित करने की परंपरा चली आ रही है गये करीब चारसो सालों से यह शुरू है । उसमें पूर्वरंग में संतसेवा, दास्य भक्ती की महती और उत्तर रंग में संत जनीजनार्दन स्वामी का आख्यान बताकर स्वामी सिंहासनारूढ होने के बाद स्वाँग रचाये जाते है । जोशी, गोंधली, बालसंतोष, कैकाडी, फकीर, जंगम, जोगी, महार, दंडीगान, कानफाटे आदी लोगोंका स्वाँग रचाया जाता है ।

"सुन हो रावल सीधा मारग । नाथपंथ यह जोगं बाबा ' । अखाद्य खाना अपेय पिना । सहजही कर्माकर्म बाबा । शून्यमंडल मो उदास रहियो । विचरत राजयोगं बाबा । हम सबके सबहि हमारो ।नही बर्नाश्रम धर्म बाबा ॥ आदिनाथ और कंठडी बाबा । धुंडीनाथ गुरु नाथं बाबा"

ऐसी पदरचना संत जनार्दनस्वामी की इस समय कही जाती है । जनी जनार्दन के पाटंगण देवस्थान में संत एकनाथ, संत तुकाराम, संत रामदास, रामीरामदास, अमृतराय, संत जगमित्र नागा, संत नामदेव आही संतों के अभंग - पद ललित के समय गाए जाते हैं । उसका क्रम भी सुनिश्चित है । स्वामी सिंहासनारूढ होने पर" रत्नजडित सिंहासन" यह संत तुकाराम का अभंग होता है ;और उसके बाद बहरुपिया स्वांग सजाते है । पहिला स्वाँग जोशी (ग्रामजोशी) का . ! और अंत में संत नामदेव का अभंग : " आकल्प आयुष्य व्हावे तया कुळा" यह प्रसाद दान माँगनेवाला अभंग होता है ।" तथास्तु" कहकर ललित समाप्त होता है । आरती और प्रसाद दिया जाता है । कुछ गावोमें गाँव के लोग स्वाँग रचाते है । वह उनकी परंपरा - विरासत के रूप में चली आ रही है । नोकरी व्यवसाय के कारण यदी वह अन्य स्थान पर गए है तो भी उत्सव के समय वह आकर स्वाँग रचाते हैं ।वह उनके कुटुंबकी ऐतिहासिक धरोहर है ऐसे वो मानते है ।

ललित की परंपरा मराठवाडा विभाग में संत दासोपंत द्वारा शुरू हुई होगी । उन्होने ललित पदोंकी रचना कियी । पदबंध का राग ताल में उपयुक्त स्वरांकन किया । बंदिशी में गायन का तालबद्ध रूपनिर्धारण किया । दक्षिण हिंदुस्थानी रागावली में गेयप्रधान शास्त्रीय रागों का प्रकटन किया । अंबाजोगाई (महाराष्ट्र बीड) में दत्त जन्मोत्सव के अवसर पर" ललितकीर्तन" करनेकी परंपरा वहाँ मौजूद है ।

विधिनाटय - लोकनाटय का संमिश्रण

ललित यह विधिनाट्य और लोकनाट्य का मिलाजुला रुप लगता है । इसके सादरीकरण मे एक आध्यात्मिक विचारधारा हे । हर कोई जीव - प्राणी84 लक्ष येनी में से घुमता फिरता मानवयोनी में आता है । यह उसका योनी में फिरना याने भिन्न प्राणी -पशू - पक्षी का जनम लेना यह एक प्रकारका स्वाँग रचनाही है । ऐसे स्वाँग रचकर यह जीव मानव जीवन प्राप्त करता है । ईश्वर के सामने जीवों ने यह जनमों का स्वाँग रचा है । यह जीव कहता है की, 'हे ईश्वर यह मेरा बहुरुपियों की तरह स्वाँग आपको यदि पसंत है तो मुझे मुक्तीका आशीर्वाद दीजिए ;और यदि आप इससे अप्रसन्न हो, तो मुझे फिर यह नाटक सामने न लाने का आदेश दीजिए । अर्थात दोनोही का तात्पर्य पुनर्जनम न पाने का है ।

"आनीता नटवन् मया तव पुरः श्रीकृष्ण या भूमिका व्योमाकाश खगांबरादि वसवः त्वप्रीयते यावधी: प्रीतो यद् यसितो निरीक्ष्यभगवन् मत् प्रार्थितं देही मे नोचन्मानय मान येत्थथ पुनः माम् इदृशी भूमिका :" संस्कृत श्लोक में इस प्रकार इसका उल्लेख आया है । " यही लीलानाट्य का तात्त्विक आधार है । लीलानाट्य के पीछे यह अध्यात्मिक पृष्ठभूमी है ।

लीलानाट्य में ईश्वर के सामने उसका दास बनकर दान मांगा जाता है । यह दान माँगने के लिए विभिन्न स्तर के , विभिन्न जाती - जमातीके, भगत, उपास्यगण, आते हैं । इसीलिए उनका स्वाँग रचा जाता है । गोसावी, जोशी, कानफाट्टे, गोंधली, दंडीगान, कैकाड, बाल संतोष, मुंढा, फकीर, आदी भिन्न भिन्न समाज - घटकों का स्वांग रचा जाता है । उनकी वेषभूषा, केशभूषा, बोलभाषा स्वीकार कर रंगपीठपर उनका रुप सजाया जाता है । इसके लिए कोई पूर्व प्रयास नही किया जाता - यह उत्स्फूर्त होता है । प्रेक्षागार में बैठे प्रेक्षक से कोई भी स्वाँग लेते है । उसका पद कहता है । यह जीवन एक रंगमंच है, सभी

जीवजाती एक स्वाँग तो है :, सभी जगत् के रंगमंचपर जीवों का जीवन व्यतीत हो रहा हैं ।" जगत् एक रंगमंच है ।" यह विचारधारा महान नाट्यलेखक शेक्सपीअर के पूर्वसे ही लोकधारा, लोकप्रज्ञा, लोकप्रतिभा में प्रचलित है ।

ललित का अनुबंध

ललित का अनुबंध लोककला प्रकारों से हैं । ललित में भारूड भी समाविष्ट है । गोंधल, वाघ्या, इनका भी तो सादरीकरण ललित में होता है, अपितु भारूड, गोंधल, जागरण यह स्वतंत्र रूप में भी प्रयोगसिद्ध लोककला के रूप में मंचपर सादर होते है ।

ललित मंदिराधिष्ठित लोकनाट्य का एक प्रयोग है । Performing Art के रूप में हम उसे देख सकते है । ललित एक भक्तीका आविष्कार है, मगर उसे लोकरंजन का हेतु भी है । ललित व्यवसायनिष्ठ नही है, इसीलिए उसमें रंगमंच, अभिनय, सादरीकरण, कलाकार, लिखित संहिता यह नही होती ! कलावंत और प्रतिभागी प्रेक्षक इनमें भक्ति और रंजन की भावना होती है ।

संत दासोपंत के देवघर में जो ललित होता है, वह दत्तजयंतीके अवसर पर होतो है । दासोपंत ने रचाये हुये पदों का गायन और सादरीकरण उसमें होता है । रंगभूमी के स्वरूप में सभामंडप और मंदिर यही रंगपीठ के रूप में सामने आता है । प्रतिभागी प्रेक्षक स्वाँग लेते है । प्रश्न पूछे जाते है । उसके उत्तर देते है । संहिता अलिखित और प्रसंगानुकूल, प्रसंगानुरूप, प्रासंगिक स्वरूपकी होती है । वासुदेव, पिंगला, भुत्या, मुंढा, सौरी आदी स्वाँग रचाकर सादर होते है । टिपरी, फुगडी, पिंगा यह नृत्य भी लोकनृत्य के रूप में रंगपीठ पर खेले जाते है ।

लोकसंवाद सहज और उत्स्फूर्त होते है । कुछ संवादों में ग्राम्यता भी रहती है । मगर उसके पीछे अध्यात्म शिक्षाका हेतु दिखाई देता है । जैसे की, मुंढा कहता है – " हम भी मुंढे । तुम भी मुंढे ' मुंढा तेरा बाप । तेरे बाप ने गध्दी चोदी । हमकु लगाया पाप" हिंदी, ब्रज, उर्दू भाषाओंकी लहज पदों में पायी जाती है । यह ललित पदों की विशेषता यह है की इसमें नाट्यगुण तथा गेयगुणों की उपलब्धी पायी जाती है ।

ललित कीर्तन के प्रमुख प्रकार

" ललित कीर्तन के चार प्रमुख प्रकार महाराष्ट्र में पाये जाते है । उसमे काला, कीर्तन, नामसप्ताह, लोकोत्सव ऐसे चतुर्विध स्वरूप के ललित प्रयोग दिखते है ।ललित -ना ट्य में लोकजागरण, समाजप्रबोधन के हेतु कुछ गीतों की रचना भी समाविष्ट होती है ।

चर्चा

ललित का मतलब व्युत्पत्ती के अनुसार 'लाड -प्यार' होता है । अपने आराध्य देव के सम्मुख हम उनको कुछ दान माँगते है । उत्सव के समाप्ती के दिन नम्रतापूर्वक कुछ माँग लेते है । उत्सवमूर्ती सिंहासनाधिष्ठित हो कर बैठने के बाद रंगपीठ पर विभिन्न जनजातियों तथा भिन्न लोकसंस्कृती के उपासक, व्यवसाय करनेवाले, भगत उनके वेषभूषा - केशभूषा कर कर उनकी परिभाषा में उनके स्वाँग रचाकर सादरीकरण होता है । यह पारंपरिक कला मंदिर के रंगपीठ पर निहित तिथीपर संपन्न होती है । डॉ. आनंदकुमार (ज्येष्ठ अभ्यासक, लोकवाङ्मय) इसको" लीला नाट्य" कहते है । यह लीलानाट्य महाराष्टूकी खासीयत है । विधिनाट्य - लोकनाट्य की सीमावर्ती इसका स्वरूप सिद्ध होता है ।

महाराष्ट्र के संत दासोपंत स्वामी के देवघर में दत्तजयंती के अवसर पर (अंबाजोगाई) यह ललित परंपरागत रूपसे होता है । बीड में संत जनीजनार्दन उत्सव में पाटंगण मठ में इसकी परंपरा चली आयी है । अंजनवती (संत तुकाविप्र) बेलेश्वर, राक्षसभुवन (दत्त जयंती) विडा (हनुमान जयंती) तलवाडा (रामजन्मोत्सव) उस्मानाबाद, गोंदी आदी ठिकानों पर यह परंपरा चालू है । इसका लोकरंगभूमी के दृष्टीसे अध्ययन जरूरी है ।

निष्कर्ष

महाराष्ट्र के मराठवाडा परिसर के यह ललित परंपरा ,लोकनाट्य का मंदिर के रंगपीठ पर रंगावतरण है । संत एकनाथ - दासोपंत ,जनी जनार्दन आदी संतों का इसमें योगदान रहा है । इसकी परंपरा और भवितव्य समझना नाटयशास्त्र के अध्ययन में उपयुक्त है । ललित के तरफ प्रयोगसिद्ध लोककला" performing Art" के रूप में हम देख सकते है । महाराष्टूकी यह" ललित" नाट्यकला की तुलना फ्रेंच नाट्यलेखक " ब्रेश्ट" की" न

_नाट्य" तंत्र से हो सकती है । मंदिर का रंगपीठ, दर्शकों का सहभाग, पुराणकथा, वर्तमान स्थिती पर भाष्य, समयोचितता यह विशेषांका अध्ययन ब्रेश्ट के नाटकों से तुलनित हो सकता है । धाराशिव में बैलबंडी में घुमकर सोंग का आविष्करण रोमन रंगभूमी के वॅगनस्टेज का आभास देता है । मतलब यह की महाराष्ट्र की यह लोकधारा, ललित परंपरा वैश्विक रंगभूमी से अपना नाता जुडाती है । इस दृष्टीसे" ललित" परंपरा का मोल समझने की आवश्यकता है ।

संदर्भसूची

मराठवाडा साहित्य संमेलनाची अध्यक्षीय भाषणे - न्या. नरेंद्र चपळगावकर, म.सा.प. औरंगाबाद

लळितानंद - डॉ. संपदा कुलकर्णी, अक्षरमानव, पुणे

लोककला : साहित्य व समाज, संपा. मुंजा धोंडगे, न्यूमॅन पब्लिकेशन, परभणी

लोकप्रज्ञा - संपा. कवठेकर, मोहरीर, अमृतमहोत्सव समिती, औरंगाबाद . 2007

लोकरंगभूमी - डॉ. प्रभाकर मांडे, गोदावरी प्रकाशन, औरंगाबाद -

लोकसाहित्य : जीवन आणि संस्कृती - संपा. डॉ. खरात महेश, सायन -पुणे .

लोकसाहित्य : संकल्पना व स्वरूप : शरदव्यवहारे, कैलास पब्लिकेशन, औरंगाबाद